Chapter-5

-=: पंचम अध्याय :=-

: कमलेश्वर के कथा-साहित्य में निरूपित समसामयिक समाज तथा उसकी समस्याएं :

पंचम अध्याय - कमलेश्वर के कथा - साहित्य में निरूपित समसामयिक समाज

§अ§ समसामयिकता :

समसामयिकता का प्रश्न भी आधुनिकता के साथ उठाया जाता है, कभी - कभी दोनों को पर्याय भी घोषित कर दिया जाता है । ऐसा है भी और ऐसा नहीं भी है । दोनों में अंतर है । वास्तव में समसामयिकता "इस समय" का बोध है, उस क्षण का बोध जिसमें हम जी रहे हैं । अतः समसामयिकता का अर्थ हुआ, "वर्तमान का बोध" वर्तमान का ही एक अंग है । "आधुनिकता युग में उत्पन्न होकर और आधुनिक युग की उपलब्धियों और असंगतियों पर विचार करके ही हम समसामायिक बोध को समझ सकते हैं ।"§1§ समसामायिकता की अपेक्षा आधुनिकता अधिक व्यापक है । समसामायिकता तो बदलती रहती है परन्तु समसामयिकता को लांघ कर ही आधुनिकता को प्राप्त किया जा सकता है । इस तरह आधुनिकता व समसामयिकता एक दूसरे के पूरक हैं । जीवन की गति का अनुभव ही समसामायिकता है । जीवन की इस गतिमान प्रक्रिया में मानव प्रत्येक लघु क्षण की अनुभूति की सफलता में समसामयिकता ही सहायता करती है । फिर भी कभी - कभी दोनों अवधारणाएं नितान्त विभिन्न अर्थ भी व्यंजित करती हैं । समय बीतने के साथ - साथ ही आधुनिकता के उपकरण भी बदलते जाते हैं, "जो पहले आधुनिक था वह आज नहीं है । समसामायिकता से तात्पर्य देशकाल के दायित्व के साथ साथ उस क्षण की तीव्रानुभूति की पकड़ से है जो परिस्थितियों से उत्पन्न है ।"§2§
समसामयिकता सभी संघर्षी तत्वों को स्वयं में आत्मसात् करती आगे बढ़ती है ।

आधुनिकता युग विशेष का एक विशिष्ट गुण है तो स्थिति विशेष के विशिष्ट पड़ाव के रूप में समसामयिकता अनेक बार उपस्थित हुई है । "आधुनिकता एक ऐतिहासिक विश्लेषण है जो हमें देश - काल का बोध देती है, समसामयिकता देशकाल के साथ सक्रियता की भी पुष्टी करती है । आधुनिक काल बोध, युग बोध की द्योतक है । विचार में आधुनिक होते हुए भी हम समसामयिक नहीं हो सकते, क्योंकि समसामयिकता का परिवेश विस्तृत नहीं होता।"3 इस समय आधुनिकता बहुत व्यापक अवधारणा है और समसामयिकता अत्यन्त संकुचित ।

---

1. डॉ० विश्वम्भरनाथ उपाध्याय : पलते और उबलते प्रश्न, आधुनिकता और समसामयिकता, दिल्ली - बोहरा प्रकाशन, 1978 पृ0-7।
2. हरिचरण शर्मा : "नयी कविता का मूल्यांकन" परंपरा और प्रगति की भूमिका, आशा प्रकाशन, 1978, पृ0 - 98
3. लक्ष्मीकांत वर्मा : नयी कविता के प्रतिमान, वाराणसी : भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन प्रथम संस्करण, पृ0 - 264 - 65

यह आवश्यक नहीं है कि आधुनिकता के साथ - साथ हमारे बीच समसामयिकता भी हो । समसामयिकता एक ओर जीवन के प्रति क्रियाशीलता का भाव जगाती है दूसरी ओर अतीत या भविष्य दोनों से हटकर युगबोध की स्थिति विशेष तथा क्षण विशेष के प्रति ममत्व का भाव उत्पन्न करती है । समसामयिकता रचना में समय के सही प्रतिफलन का पर्याय है और तत्काल का प्रतिस्थापन्न । वह तत्काल का - वर्तमान क्षण का - आधुनिकता में संपीड़न है जिसमें देश-काल की जीवन्तता के साथ विशेषयुक्त वैज्ञानिक तर्क जुड़ा है ।

"समसामयिकता कलेवर की चीज़ होती है आधुनिक समसामयिक बिखराव और कलेवरगत उथल - पुथल के भीतर निरन्तर प्रवाहित गतिशील चेतना को समझने का दृष्टि-कोण है, इसलिए समसामायिक हलचलों को मुखरित करने वाला साहित्य सही अर्थों में आधुनिक ही हो, यह जरूरी नहीं ।"(1) वास्तव में आधुनिकता मानव जीवन की गति की सूचक है । आज व्यक्ति अनुभूति के स्तर पर जो भी अनुभव करता है वही आधुनिकता है । "दूसरा पक्ष भी है जिसके अंतर्गत परिवेश तथा रूपाकार का परिवर्तन, शैली और भंगिमा का नव नवरूपान्तर आता है । इन दोनों पक्षों की पीठिका पर उदित परिवर्तित मूल्य बोध तथा टेकनालॉजी, विज्ञान राजनीति, आंतर्राष्ट्रीयता, संस्थागत विकास, यंत्र प्रभाव से उदित नूतन सामाजिक निकाय तथा आचार आदि अनेक नवीन प्रक्रियाओं, समस्याओं और पद्धत्तियों में व्याप्त अन्तः संबंधों की समगत पहचान ही आधुनिकता के दृष्टिकोण को जन्म देती है ।"(2)

समसामयिकता एक जीवन - दृष्टि है । समसामयिकता अंग्रेजी के "कन्टेम्पोरेरी" शब्द से बना है, जो समय से संबंधित होता है और आधुनिकता का संबंध संवेदना या प्रवृतिशैली से होता है ।

जहाँ तक समसामयिकता व समकालीनता का प्रश्न है वहाँ, "समसामयिकता और समकालीनता एक दूसरे के विरोधी और विपरीत नहीं परन्तु एक दूसरे से अलग और कुछ दूर अवश्य हैं । कहना चाहूंगा कि समकालीनता समसामयिकता की आधुनिकता है अर्थात् उसकी सप्रश्नता अथवा प्रश्नशीलता है ।"(3)

---

1. मधुसूदन चतुर्वेदी (संपा.) : कल्पना, कमर्शियल प्रिंटिंग प्रेस, अंक- 8-9, वर्ष- 1969
2. गिरजा कुमार माथुर : नयी कविता सीमाएं और संभावनाएं दिल्ली - नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1973, पृ0 - 105
3. चन्द्रशेखर : आधुनिकता बनाम समकालीनता, दिल्ली-1982, पृ0 9

समसामयिकता के धरातल पर ही समकालीनता गति प्राप्त करती है । अतः दोनों में प्रक्रियात्मक संबंध स्थापित हो जाता है । "समसामयिकता की चक्राकार संक्रमण-शीलता और सक्रान्त-बिन्दु पर उसका "वर्ण-संकर" रूप ही समकालीनता को जन्माता है और वह संपूर्ण परिवेश के प्रति एक गैर - समझौतावादी रुख लेकर गतिमान हो उठती है । समकालीनता की प्रक्रिया समसामयिकता का सापेक्षता में मंथर - अमंथर किन्तु निरंतर रूप में गतिशील बनी रहती है । उसका गैर - समझौता - वादी रूप प्रायः विरोधी भी बना रहता है । इसमें समसामायिक परिवेश के मृत द्वन्द्व के प्रति अस्वीकार भी बढ़ता रहता है । उन्होंने तोड़ने में जहां वह स्वयं को असमर्थ अनुभव करती है, वहां उसमें उसी अनुपात में आक्रोश भी मचलने लगता है । इस प्रकार अस्वीकार और आक्रोश गैर समझौता-वादी रूप को ऐसी दो मुद्राएं है जो इसे सतत् प्राणवान और स्वस्थ बनाए रखती हैं । इसी कारण इसके चरित्र में ऐसी वर्चस्विता और स्वरूप में गरिमा आ जाती है जो इसे आधुनिकता की वरेण्या बना देती है ।"(1)

इस प्रकार विशेष युग में आधुनिकता की समस्या से संघर्ष करता है तथा अपने युग की समसामयिकता को स्वीकार करता है । निःसंदेह यह कहा जा सकता है कि समसामयिकता अपने युग के संदर्भों की चेतना है तथा युगबोध का अर्थ-परिवहन उस द्वारा होता है ।

(आ) कमलेश्वर जी के उपन्यास तथा कहानी में देशकाल और समसामयिक समाज :

कमलेश्वर जी के अधिकांश रचनाएं सामाजिक है । उपन्यास और कहानियां दोनों तरह की रचनाएं पौराणिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक आदि रचनाओं की भांति ही सामाजिक उपन्यासों में भी देशकाल, जीवन की यथार्थता और उसके परिवेश का बड़ी सजीवता से चित्रण होता है । सामाजिक रचनाकार के लिए जीवन को अधिक निकट से चित्रित करने तथा उसके विभिन्न पक्षों को विश्लेषित करने के लिए परिवेश चित्रण एक प्रकार से अनिवार्य ही हो गया है । उपन्यासकार के बारे में डॉ० भागीरथ मिश्र के विचार में "सामाजिक उपन्यासों में तो लेखक प्रायः अपने युग की देखी सुनी और अनुभूत पृष्ठभूमि देता है और पाठक के समसामायिक होने के कारण उसको जांचने और विश्वास करने का अवसर रहता है । आगामी युगों के लिए तो सामाजिक उपन्यासकार सामाजिक और

---

1. चन्द्रशेखर : पूर्वोक्त - पृष्ठ - 9

सांस्कृतिक इतिहास की सामग्री प्रदान करता है । अतः मेरा तो विश्वास यह है कि यदि उपन्यासकार, अपने समाज का अत्यन्त यथार्थ यहाँ तक कि ऐतिहासिक यथार्थता को ध्यान में रखकर वास्तविक जीवन का चित्रण करता है, तो वह न केवल साहित्य की सृष्टि करता है, वरन् सांस्कृतिक और सामाजिक इतिहास के लिए भी सामग्री तैयार करता है या पृष्ठभूमि बनाता है ।"(1) देशकाल और स्थानियता :-

स्थानीयता से तात्पर्य "लोकल कलर" से है । इसमें लेखक किसी विशिष्ट स्थान के देशकाल - वातावरण तथा व्यावहारिक जीवन का सच्चा स्वरूप उपस्थित करता है । स्थानीय रंग के उपयोग से जहाँ एक ओर कथानक की विश्वसनीयता बढ़ती है, वहाँ दूसरी और उसके बाहुल्य से कथानक बोझिल हो जाने की भी सम्भावना रहती है । अतः अनुपातिक दृष्टि से ही उसका उपयोग करना श्रेयस्कर होता है । "स्थानीय रंग का महत्व दो कारणों से बढ़ जाता है । इसके उपयोग से उपन्यास में प्रभावात्मकता आ जाती है तथा उसकी स्वाभाविकता में वृद्धि होती है । इन्हीं कुछ कारणों से उपन्यासों में स्थानीय रंग देना आवश्यक समझा जाता है । सभी प्रकार के उपन्यासों - ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक आदि में स्थानीय रंग समान रूप से महत्व रखता है ।"(2) स्थानीय रंग के अनुपात का ध्यान नहीं रखने से रचना बोझिल हो जाती है । देशकाल का वर्णन अनुपात से बढ़ जाने पर जी उबाने लगता है । देशकाल का वर्णन कथानक को स्पष्टता देने के लिये होता है । अतः कुशल उपन्यासकार कथाप्रवाह के विस्तार या चरित्र - विकास में बाधक होने वाले वर्णनों से सदैव दूर रहता है । "किसी स्थिति - विशेष के सफल अंकन के अभाव में कभी - कभी भावों को पूर्णव्यन्जना हो नहीं पाती और कोई अभाव - सा खटकता रहता हैं । सूक्ष्म निरीक्षण के छोटे - छोटे चमत्कार द्वारा ही इतनी शीघ्रता और पूर्णता के साथ वास्तविक जीवन का भ्रम उत्पन्न कराया जा सकता है । वातावरण के सफल तथा मनोरम चित्रण का कहानी के लिए बहुत मूल्य होता है ।"(3)

इससे स्पष्ट है कि सन्तुलित - मर्यादित तथा उपयोगी देशकाल के चित्रण से एक ओर जहाँ उपन्यास से जीवन की यथार्थता का बोध होता है, वहीं दूसरी ओर उपन्यास का कलात्मक सौन्दर्य भी बढ़ जाता है । कमलेश्वर के अधिक उपन्यास अधिक सामाजिक हैं सामान्यतः सामाजिक उपन्यासों में देशकाल, जीवन की यथार्थता और उसके परिवेश

---

1. काव्य शास्त्र : डॉ० भगीरथ मिश्र पृ० 88
2. हिन्दी उपन्यास में कथाशिल्प का विकास - डॉ० प्रतापनारायण टण्डन, पृ० 99
3. हिन्दी उपन्यास, शिवनारायण श्रीवास्तव, पृ० 453, 454

का बड़ी सजीवता से चित्रण होता है । सामाजिक उपन्यासकार के लिए जीवन को अधिक निकट से चित्रित करने तथा उसके विभिन्न पक्षों को विश्लेषित करने के लिये परिवेश चित्रण एक प्रकार से अनिवार्य ही हो गया है । डॉ० भगीरथ मिश्र ने लिखा है --

" सामाजिक उपन्यासों में तो लेखक प्रायः अपने युग की देखी सुनी और अनुभूत पृष्ठभूमि देता है और पाठक के समसामयिक होने के कारण उसको जांचने और विश्वास करने का अवसर रहता है । आगामी युगों के लिए तो सामाजिक उपन्यासकार सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास की सामग्री प्रदान करता है । अतः मेरा तो विश्वास यह है कि यदि उपन्यासकार, अपने समाज का अत्यन्त यथार्थ यहां तक कि ऐतिहासिक यथार्थता को ध्यान में रखकर वास्तविक जीवन का चित्रण करता है, तो वह न केवल साहित्य की सृष्टि करता है, वरन् सांस्कृतिक और सामाजिक इतिहास के लिए भी सामग्री तैयार करता है या पृष्ठभूमि बनाता है ।"(1)

(इ) वातावरण सृष्टि :

वातावरण सृष्टि को हम विभाजित कर सकते हैं ।

(1) प्रकृति वर्णन और (2) समाज वर्णन

(1) प्रकृति वर्णन :

कमलेश्वर प्रकृति प्रेमी साहित्यकार हैं । आवश्यकतानुसार उन्होंने अपने साहित्य में प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन किया है । प्रकृति के अंतर्गत बाजार, नदी, शहर, ग्राम, ऋतु वगैरह का सुन्दर चित्रण उनकी रचनाओं में मिलता है ।

अधिकतर रचनाओं में प्रकृति वर्णन एक भूमिका या उद्दीपन के लिए किया है । फिर भी अपनी सजीवता, स्वाभाविकता, नवीनता, ताजगी आदि गुणों के कारण उनके प्रकृति चित्रण बहुत सुन्दर बन पड़े हैं ।

डाक बँगला में पतझड़ का वर्णन । "पतझर का सौन्दर्य । वैसी ही थी इस उस दिना माथे पर बालों की लटें रस - रक्ति वन - घास की तरह हिल रही थीं । जैसे पतझर में दूर - दूर के दृश्य साफ हो जाते हैं, दृष्टि की सीमा बढ़ जाती है, उसी तरह इरा के पतझरे - तन की एक - एक टहनी साफ थी .... और आंखों का नीलाकाश दूरियों तक खुल गया था .... पतझर के रूखे वैभव की तरह था इरा का सौन्दर्य .....

---

1. काव्यशास्त्र , डॉ भागीरथ मिश्र - पृ० 88

उसके शरीर में गरम हवाओं की सनसनाहट थी और शब्द उड़ते पत्तों की तरह बोल रहे थे । उसके बालों की फिसलन में सूखी घासों से बहती हवा की उदास आवाज थी, और झील के पानी में आग लगी हुई थी ।"

इसी प्रकार बरसात का भी वर्णन है - "बरसात का भीगापन पूरे शरीर के रंध्र - रंध्र में समा गया था .... पीठ की मांसल चट्टान गीली हो आई थी .... ब्लाउज़ की किनारियां नमी से चिपक गई थीं । ओठ घुले - घुले - से हो गए थे और बरौनियां भीगकर कोमल कांटों की तरह नुकीली हो गई थी .... भाप की शीतलता भरी नम - गरमाहट थी उसके तन में, जो पास खड़े को भी नमी से भर देती है .... उसके चारों ओर भीगी बन - घास की गंध उड़ रही थी । स्निग्ध शीतलता के ज्वार उमड़ रहे थे .... ।"(*)

उनके एक अन्य उपन्यास " लौटे हुए मुसाफिर में नदी का भी वर्णन किया है । "नदी का पाट फैल गया था । नदी की सतह पर बारिश की लगातार बूँदें ऐसे गिर रही थीं जैसे नदी और आसमान के बीच सूत पिरो दिये गये हों । अँधेरे में वह झीना परदा बड़ा स्वप्निल लग रहा था ।"(2)

इसके अतिरिक्त पर्वत, जंगल, वृक्ष, फूल आदि के सजीव वर्णन कमलेश्वर ने अपनी रचनाओं में किये हैं । और ये वर्णन प्रकृति के न सिर्फ कोमल व रोमांटिक रूप को प्रस्तुत करते हैं बल्कि प्रकृति के भयंकर रूप को भी जीवन की कटु स्थिति के रूप में प्रस्तुत करते हैं । बरसात का एक ऐसा ही दृश्य है -

" चित्रा जिन दिनों आई थी उन दिनों बारिश शुरू हो चुकी थी । बड़ी घनघोर बारिश हुई थी और हमारे कमरे की दीवारें नम हो गई थीं । सीमेंट जगह - जगह से उखड़ गया था ..... भीगे कपड़ों की बदबू से माथा चकराने लगता था और गीले तौलिये से बदन पोंछते - पोंछते सभी के तनों से बदबू फूटने लगी थी । बदबू मारने के लिए अगर ऊपर से ढेर - सा पाउडर छिड़क भी लिया, ... और कुछ ही देर में शरीर चिपचिपाने लगता ।"(3)

कमलेश्वर जी ने प्रकृति का वर्णन हमेशा ही संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया है । फलस्वरूप यह वर्णन कहीं भी ऊबाऊ और कथानक को रोकता नहीं है ।

---

1. कमलेश्वर - डाक बंगला - पृ0 - 42 - 43
2. -वही - "लौटे हुए मुसाफिर" पृ0 113
3. -वही - "तीसरा आदमी" पृ0 25

§2§ समाज वर्णन :

अपनी रचनाओं में कमलेश्वर ने तत्कालिन भारतीय समाज के राजनैतिक, आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक पक्ष को सफलता पूर्वक अंकित किया है । किसी विशेष स्थान के देशकाल व वातावरण के सफल चित्रण से कथानक की विश्वसनियता बढ़ जाती है। और रचना स्वाभाविक हो जाती है । साथ ही वातावरण चित्रण की अतिरंजना कथानक को बोझिल कर देती है । अतः वातावरण के मनोरम व अनुपातिक चित्रण का कहानी की सफलता के लिए बहुत महत्व होता है ।

"तीसरा आदमी" नामक उपन्यास में समाज का सुन्दर वर्णन किया है ।

" ..... शाम होते ही हमारी गली में उदासी भरने लगती थी । एक "- एक कमरों में रहनेवाली गृहस्थियां बाहर गली में निकल आती थीं । गली भर में पत्थर के कोयलों की अंगीठियां सुलगने लगती थीं । नाली के पास गली की जमीन साफ करके पानी छिड़क लिया जाता था और खाटें बिछा ली जाती थीं । उन पर बैठी - बैठी औरतें सब्जियां काटती रहती या कोई और काम करती रहतीं । सामने की दीवारों पर लगे हुए नालियों के पाइप बड़ी - बड़ी छिपकलियों की तरह चिपके लगते थे, और मेरा मन गिज - गिजाहट से भर उठता । इन कुछ ही दिनों में हमारे सारे कपड़ों का रंग और बू एक खास किस्म की हो गई थी । तौलियों में अजीब - सी महक समा गई थी और बिस्तर सड़े हुए अनाज की तरह महकने लगे थे । "§1§

" हम सड़क के किनारे - किनारे टहलते रहते और दीवार के उस पार कूड़े की रेलगाड़ियां भर - भरकर छूटती रहती । डिब्बों में कूड़ा भरते हुए जमादारों की टोलियों की भनभनाहट, लड़ते हुए, कुत्तों का शोर और बेलचों, तसलों, पल्लों और फावड़ों की आवाजें आती रहतीं । सैकड़ों टन कूड़े की बदबू भी उस वक्त चित्रा के जूड़े में महकते बेला के फूलों में दब जाती और हम चुहल करते हुए उसी सड़क पर चहल कदमी करते रहते ।

कमलेश्वर ने "लौटे हुए मुसाफिर" उपन्यास में भी समाज का वर्णन किया है ।
" दूर पर, नदी किनारे मछुआरों की बस्ती थी ..... ऐसे मछुआरे जो खेतीबारी भी करते थे और मौसम होने पर ठेका लेकर मछलियाँ भी पकड़ते थे । नदी के रेतीले पाट में वे ककड़ियाँ, खरबूजा - तरबूज और कुछ साग - सब्जियाँ भी उगा लेते थे तथा ऊपरी मैदानों में बाजरा, रौंसा वगैरह छिटक कर कुछ पैदा कर लेते थे । गिने - चुने मकान थे उनके,

---

1. कमलेश्वर : "तीसरा आदमी" पृ0 - 3।

बरसात में यह मकान भी कभी - कभी छोड़ने पड़ जाते थे और एकाएक नदी का पानी बढ़ जाने से खेत भी चौपट हो जाते थे । इसीलिए कोई भी ऐसा धन्धा करने में उन मछुआरों को परेशानी नहीं होती थी, जिससे चार पैसे हाथ में आते हों ।"﴾1﴿

कमलेश्वर की कहानियों में कस्बे का जीवन का सचोट चित्रण किया है । "देवा की माँ" और "राजा निरबंसिया" से लेकर "इतने अच्छे दिन" तक कमलेश्वर ने अपनी कहानियों में कस्बे के जीवन परिवेश को बड़ी प्रमाणिक सूक्ष्मता से चित्रित किया है । कमलेश्वर का इस जीवन से अत्यंत निकट का परिचय है । उनकी कहानियों में कस्बे के "मुहल्ले में चबूतरों पर मोमबत्ती की रोशनी में नोगुटिया खेलते पात्र हैं, "﴾2﴿ तो कहीं कस्बे के मन्दिर और मस्जिद में चलते स्कूल और मकतबों के बच्चे हैं, कहीं बस अड्डे की रौनक है, कहीं दुकानों के रंग - बिरंगे आकर्षक "साइन बोर्ट" है देहाती की आँख में पीली दवा की जगह टिंचर डालने वाला नीम - हकीम डाक्टर है, कम्पाउण्डर के बल चलने वाले कुस्बे के अस्पताल हैं, जिन्दगी के बोझ को लस्टम - पस्टम ढोते कोट की आस्तीनों में पैबंद लगाये "नौकरी पेशा" चालू राधे लाल हैं, "इतने अच्छे दिन" आने पर भी कस्बे के थके - हारे ट्रक - ड्राइवरों को हर आराम मुहैया कराने वाली सराय है ।

इसी प्रकार चिकवों की बस्ती का वर्णन देखें । "जुमन साँई की कोठरी बस्ती का केन्द्र है । हरदम अगर और लोबान जलता रहता, दो - चार आदमी बैठे रहते । मस्जिद के कुँए की रौनक । गफूर की मशक कुँए पर भरती और टाट के परदों के पीछे रहने वाली बेगमों और परदनशीन बीबियों की इजाजत से कच्चे घरों में खाली होती । मस्जिद के दालान में मकतब लगता, मन्दिर के अहाते में पाठशाला जमती । मकतब में बच्चे नरकुल की तरह हिल - हिल कर कुरान पाक की आयतें रटते और पाठशाला में सन्तरी की तरह खड़े होकर प्रार्थना करते और पहाड़ा दुहराते ।"﴾3﴿ इसी प्रकार छुट्टी होने पर बच्चों की तख्तियों, बस्तों और पटरियों से लड़ाई, बुदक्के फूटना, खड़िया से नाक - मुंह रंग जाना और चित्रों में बीता हुआ कस्बा साकार हो जाता है । एटा - कुरावली का बस अड्डा देखना है, जहाँ क्लीनर और ड्राइवर था तो "इमली की छाँह में पड़े सोते या मोटर की मोटी - मोटी गद्दियां बिछा कर जोड़ पत्ता खेलने में मशगूल रहते हैं । कस्बे की दुकानों पर साइन बोर्डों की बहार दिखिये --

---

1. कमलेश्वर : लौटे हुए मुसाफिर" - पृ0 - 114
2. राजा निरबंसिया : "पानी की तस्वीर" पृ0 - 17
3. राजा निरबंसिया : "धूल उड़ जाती है " पृ0 - 36

" बहुत दिन पहले जब दिनानाथ हलवाई की दुकान पर पहला साइनबोर्ड लगा था तो वहाँ दूध पीने वालों की संख्या एकाएक बढ़ गयी थी । फिर बाढ़ आ गयी, और नये-नये तरीके और बेलबूटे ईजाद किये गये । "ऊँ" या "जय हिन्द" से शुरू करके "एक बार परीक्षा कीजिए" या मिलावट साबित करने वाले को सौ रूपया नकद इनाम" की मनुहारों या ललकारों पर लिखावट समाप्त होने लगी ।"(1) दुकान ही नहीं कस्बे के घर और मकान और उनमें रहने वाले -- सभी अपनी पूरी सजधज से इन कहानियों में आये हैं । कस्बे के अस्पताल का सूक्ष्म चित्रण "राजा निरबंसिया" कहानी में इस रूप में मिलता है, "कस्बे का अस्पताल था । कम्पाउण्डर ही मरीजों की देखभाल रखते । बड़ा डाक्टर तो नाम के लिए था या कस्बे के बड़े आदमियों के लिए । छोटे लोगों के लिए तो कम्पोटर साहब ही ईश्वर के अवतार थे ।(2) जिस हाल में कस्बे का अस्पताल है उसी हाल में थाना भी है । "थाने के सब अफीमची - मदकची कान्सटेबल जमा किये गये । बीस की जमा-पूंजी में सात गायब, दो दस्त से बीमार थे, जीते - मरते ग्यारह हाजिर हुए, जिनमें से तीन की वरदियाँ धुलने गयी थी, एक की पगड़ी में हरी सब्जी बंधकर गाँव गयी थी । सो वापस नहीं आयी ।"(3)

कस्बे के बसों और ट्रकों के अड्डों का वर्णन कमलेश्वर की कई कहानियों में आया है, यथा "धूल उड़ जाती है", "मुरदों की दुनियां, "थानेदार साहब", "इतने अच्छे दिन" आदि में । किन्तु इनमें सबसे जीवंत वर्णन "इतने अच्छे दिन" में ट्रक - ड्राइवरों की सराय का मिलता है ।"बड़ा सा हाता घेर कर बनायी गयी ट्रकों की सराय", दिन में खाने की मेजें और बैंचें पड़ जाती है, रात को खटिया, थके माँदे ड्राइवर और क्लीनरों को दिन में "आराम की सुविधा" और रात गुजारने के लिए "पूरा इंतजाम" हर तरह का खाना । मुर्गा - शुर्गा खाना हो तो सामने दड़बे में से पसंद करो, बीड़ी - सिगरेट की कमी नहीं, ग्रामोफोन भी बजता ही है, दाँत खोदते - खोदते तसवीरें देखनी हों तो उन्हें देखो, गुरूवाणी सुननी हो तो रिकार्ड सुनो । औरतों की तस्वीरें देखनी हो तो वो भी लगी हैं । लुंगी कच्छी धोना हो तो पटिया बिछी है, ट्यूबबेल लगा है, सुखाने के लिए तार बंधा है । दिशा मैदान के लिए सूखे खेत पड़े हैं ।"(4) इसी प्रकार इसी कहानी में हड्डियों की खदान, ठण्डी रात में सोये पेट्रोल-पम्प और उसके आस - पास के प्रभाव का सक्षम वर्णन है । इन सब वर्णनों से कस्बे का परिवेश और जीवन कमलेश्वर की कहानियों में बड़ी सूक्ष्मता से अंकित हुआ है ।

---

1. कमलेश्वर : "गर्मियों के दिन" - पृ0- 135, (2) पूर्वोक्त - पृष्ठ - 82
3. राजा निरबंसिया : "थानेदार साहब" पृ0 - 224
4. सारिका, मार्च 1975 का अंक